5913

The Role of Opposition Party in India

by

M.R. Masani, M.P.

Since in society there are bound to be various individuals and groups pursuing ideas and having interests which are not necessarily identical or even compatible with one another it is natural that those who do not succeed in having their point of view accepted by the Government of the day, should strive to pursuade others to their point of view and ultimately having the government which would implement their point of view. It follows that the opposition in a democracy has a role to play almost as important as that of the ruling party. In a sense both the ruling party and the opposition represent the hopes and aspirations of living human beings and the mere difference in the numbers they represent at any given point of time does not make any difference to their importance. Indeed opposition is the sine qua non of a democracy. The British author E.F.M. Durbin in his book on socialism and democracy makes the existence of an opposition the acid test of the genuineness of a democracy. Neither a written constitution, nor fundamental rights on paper nor the secret ballot, he rightly points out, make a democracy genuine unless opposition parties are not only tolerated but actually function. The Soviet Union is a good example of the truth of Durbin's thesis.

The democratic process has two characteristics. First, in the absence of unanimity it recognises that for the time being the view of the majority must prevail since obviously some decisions have to be taken. At the same time, since human judgement is fallible, it should be open for mistakes to be rectified in the light of new fac-

and experience and The opportunity should be there for the minority today to become in course of time the majority.

It is necessary then that an opposition party functions as a watch dog of the interest of the minority and the critic of the majority. It also functions as the watch dog of the observers of the constitution and the fundamental principle of a free society. In discharging these functions it helps in focusing attention on the issues with which a country is faced and provide alternative solution. Its role is partly negative, partly constructive.

In India thanks to the ignoring of Mahatma Gandhi's advice that on the achievement of national independence, the Indian National Congress should withdraw from the political scene and allow its members to form two political parties functioning in the Parliamentary sphere, it has not been able to evolve a satisfactory two-party system. While a two-party system is not feasible so long as the Soviet dictatorship exists in Moscow and insists on having its fifth column in this country, a three-party system can and should be achieved. So long as this does not happen, one will have to accept the fact that, while the Constitution permits of an opposition, no opposition in fact exists in the sense of a potential alternative Government, capable and ready to take office the moment it received the mandate of the electorate. How is this lacuna in our democracy to be filled?

Obviously if the democratic opposition parties in the country were to merge in one big "National Democratic Party" the problem could be solved overnight. Unfortunately, the realities of the situation rule it out as an immediate solution though it should remain the

objective. The second alternative is that which Acharya Kripalani has advocated, namely, that of common functioning on the basis of an agreed minimum programme. Unfortunately, the response from two of the parties concerned has been so negative that here again immediate success appears to be elusive.

The third alternative is that of democratic opposition parties working together on specific issues on which they find themselves in agreement while going their own ways and pursuing the policy of "live and let live" in regard to other matters. This path has in fact been followed with increasing success since 1960. It was the spontaneous working together of democratic opposition parties that enabled opposition candidates to defeat the Congress supported by the Communists in Dohad, Amroha, Farrokabad and Rajkot. Pursuing this path promises results. One is encouraged in this view by the fact that the opponents of democratic unity in India recognise it as the main threat to their position. Mainstream, a Communist journal of Delhi, said in its issue of June 8 after the Rajkot by-election "In this respect, the Right has a lesson to impart to the Left today. It did not go in for summit negotiations among its different components but preferred unity in action, and that has paid it rich dividends."

As this unity in action develops it should lead to a generalisation of the experience of the recent by-elections. Now that the people have seen been shown at Amroha and Rajkot how the opposition can win, both the wisdom of the political parties and the pressure of the public opinion will impel them towards an electoral understanding in the next general elections of 1967, to ensure that there should be only one opposition candidate against the ruling party or the Communist Party. This is the objective towards which serious political workers in all the democratic parties should strive in the coming months.

तार : "सर्वसेवा" वाराणसी

Weekly Bhoodan-Yagna
Rajghat-Varanasi-1

2394/63

साप्ताहिक भूदान-यज्ञ

राजघाट, वाराणसी-१

फोन :

RECEIVED
29 JUL 19..
NO 03087

दिनांक १८-७-६३

आदरणीय बंधु,

हिन्दी साप्ताहिक "भूदानयज्ञ" के ताजा अंक में अनिवार्य बचत योजना के बारे में विनोबाजी का एक भाषण प्रकाशित हुआ है। उसकी कटिंग आपकी जानकारी के लिए साथ में भेज रहा हूं।

वैसे तो "भूदानयज्ञ" आपको बराबर जाता है और हम आशा करते हैं कि आप विनोबाजी के विचारों तथा सर्वोदय आंदोलन की गतिविधि से परिचित रहने की दृष्टि से उसे देख भी पाते होंगे। पर चूंकि विनोबाजी का यह भाषण महत्व का है और उसमें अनिवार्य बचत योजना के अलावा उन्होंने "पार्टी अनुशासन" के प्रश्न पर भी अपने विचार स्पष्टता के साथ रखे हैं इसलिए आपका ध्यान विशेष तौर से इस भाषण की ओर आकर्षित करना मैंने उचित समझा।

आपका,

सिद्धराज ढड्ढा

-सिद्धराज ढड्ढा-

संपादक

संलग्न-कटिंग

श्री मीनू मसानी
जनरल सेक्रेटरी - स्वतंत्र पार्टी
१४३ महात्मा गांधी रोड
बंबई-१

लि-

भूदान यज्ञ

साप्ताहिक

भूदान-यज्ञ मूलक ग्रामोद्योग प्रधान अहिंसक क्रान्ति का सन्देश वाहक

संपादक : सिद्धराज ढड्ढा

वाराणसी : शुक्रवार | १९ जुलाई, '६३ | वर्ष ९ : अंक ४२

हम भूल न जायँ

"भारत को, शहरों और कस्बों से भिन्न, अपने सात लाख (विभाजन के तुरंत बाद, वास्तव में 'करीब पाँच लाख' -सं०) गाँवों की दृष्टि से सामाजिक, नैतिक और आर्थिक आजादी अभी प्राप्त करना बाकी है। —सच्ची लोकशाही के ध्येय की ओर बढ़ने के मार्ग में सैनिक शक्ति पर नागरिक शक्ति की विजय का संघर्ष अनिवार्य है।"

(२९-१-४८) —गांधीजी

अनिवार्य बचत योजना से मध्यम वर्ग का शोषण

विनोबा

आज एक एम० एल० ए० ने हमारे सामने कुछ सवाल पेश किये। उन्होंने दो बातें हमारे सामने रखीं। उनमें से एक है अनिवार्य बचत वाली (कम्पल्सरी सेविंग) बात। यह मध्यम वर्ग के लोगों के लिए तकलीफ देने वाली बात है। उन्होंने हमें उसका अनुपात भी बताया। प्रमाण में कुछ कम-बेसी है। नीचे वालों को कम देना पड़ता है और ऊपर वालों को ज्यादा। नीचे वाले याने जिनकी आमदनी प्रति माह एक सौ पचीस रुपया है, उन लोगों को तीन प्रतिशत याने पौने चार रुपये देना पड़ेगा।

इस एक सौ पचीस रुपये आमदनी का क्या अर्थ है? मध्यम वर्ग के परिवार में एक मनुष्य कमाता है और उस पर पाँच मनुष्यों का परिवार चलता है। उसी में से बच्चों की शिक्षा का खर्च, बीमारी का खर्च इत्यादि सब प्रकार का खर्च करना पड़ता है। पाँच मनुष्यों के परिवार के लिए एक सौ पचीस रुपया याने प्रति व्यक्ति पचीस रुपया हुआ। उसमें से भी अनिवार्य बचत की रकम ले ली जाय, तो उसके लिए क्या कहा जायगा? लेकिन "चीन से मुकाबला करने के लिए इतना शोषण करना ही होगा!"

धान्य की महँगाई

दूसरी बात यह बतायी कि चावल के दाम पैंतीस रुपया मन याने चौदह आने सेर हो गये हैं। इतना महँगा चावल, जो कि खाने का मुख्य धान्य है! इधर यह महँगाई और उधर यह अनिवार्य बचत! दोनों के बीच बेचारे सामान्य लोग पीसे जायेंगे।

प्रजातंत्र की समाप्ति

यह बात कहने वाले कांग्रेस के एक एम० एल० ए० थे। लेकिन इस पर वे ज्यादा बोल नहीं सके। यह पार्टी-अनुशासन होता है। इसलिए अपनी नापसंद बात को भी वे स्पष्ट रूप से नहीं कह सकते। चुप रहेंगे, पर बोलेंगे नहीं। इसके विपरीत दूसरी पार्टी वाले लोग मुँहफट बोल देंगे। क्योंकि कांग्रेस वालों के सीले हुए मुँह हैं और उनके फटे मुँह हैं। इसका परिणाम क्या होगा है? विरोधी पार्टी के मुंह पर अंकुश नहीं होता, इसलिए जनता पर उनकी टीका का असर नहीं पड़ता। कांग्रेस वाले रचनात्मक (कंस्ट्रक्टिव), संयमयुक्त टीका कर सकते हैं, लेकिन उनके मुँह बंद रहते हैं। इस तरह से होने पर प्रजातंत्र की समाप्ति होती है।

लोक-व्यवहार की बात

लोकशाही का तत्त्व अनुशासन में नहीं, वरन् हरएक का दिल खोल करके मत प्रकाशन करने में है। इसी में उसका रहस्य है। अगर अनुशासन के नाम पर वे दबाये जायेंगे तो देखते-देखते लोकशाही का रूपांतर एकतंत्री राज्य में हो जायगा। इतना ही नहीं, देखते-देखते उसका रूपांतर सैनिक तानाशाही (मिलीटरी डिक्टेटरशिप) में होगा। यह सब सोचने की बात है। राजनीति बाबा का विषय नहीं है। बाबा का विषय है लोगों का उत्थान करना। लोगों के उत्थान में ये सब बातें आती हैं। इसे 'पालिटिक्स' नाम देना गलत है। यह तो लोक व्यवहार की बात है।

चीन के मुकाबले के लिए दो बातें आवश्यक

अभी हमारा चीन के साथ मुकाबला हो रहा है। इसका अर्थ यह है कि चीन में एक आदर्शवाद और एक सेना यंत्र है। उसका हमें मुकाबला करना है। यह मैं सर्वोदय की दृष्टि से नहीं कह रहा, एकदम साधारण व्यवहार की बात कह रहा हूँ। आध्यात्मिक स्तर से नहीं, किन्तु एक सामान्य नागरिक के व्यावहारिक स्तर से बोल रहा हूँ। चीन के साथ मुकाबला करने के लिए आपके पास एक सेना यंत्र और एक आदर्शवाद होना चाहिए। उसमें से सेना यंत्र की बात तो आप समझ गये हैं। उसे आप बना रहे हैं। दोनों बाजू सेना बढ़ने पर शक्ति-संतुलन (बैलेन्स आफ पावर) होता है।

कुछ लोग कहते हैं कि उसमें शांति रहती है। यह एक पुरातन विचार है। आणविक युग में उस पुरातन रुयाल की खास कीमत नहीं। लेकिन आणविक युग में भी पुरातन युग का काम चल रहा है और पुरातन युग अभी पूरी तरह से गया भी नहीं है। हम मानते हैं कि सेना की शक्ति होने पर कुछ बचाव होगा। लेकिन आपको चीन की दो ताकतों के साथ मुकाबला करना है, तो आपको भी दो ताकतें खड़ी करनी होंगी। केवल सेना-शक्ति से काम नहीं चलेगा। इसलिए यह देखना होगा कि आपका आदर्शवाद क्या है।

कांग्रेस का आदर्शवाद

कांग्रेस कहती है कि हमारा आदर्शवाद समाजवाद है, लेकिन उसे हम गणतांत्रिक पद्धति और शांति से ही लाना चाहते हैं। "बाई पीसफुल एण्ड डेमोक्रेटिक मेथड्स"-यह है कांग्रेस का विचार। यदि यह नया विचार है, तो क्या समाजवाद का यह लक्षण माना जायगा कि चावल का दाम इतना बढ़ा हो और अनिवार्य बचत इतनी निम्न श्रेणी पर आ जाय और ये दोनों बातें कांग्रेस वालों को पसंद न हों, तब भी वे मुँह सीकर बैठे रहें? यह कैसा प्रजातंत्र है? इसलिए हमें समझना चाहिए कि जहाँ लोकमत दब जाता है वहाँ पार्टी-अनुशासन के नाम से प्रजातांत्रिक मूल्य समाप्त हो जाते हैं।

फिर आपका जो यह दावा है कि आप अपना आदर्शवाद चीन के खिलाफ स्थापित कर सकते हैं, वह नहीं चल सकेगा। इस हालत में आपके हाथ में केवल सेना ही रहती है। वह केवल सेना का 'फ्रन्ट' है। उससे क्या होगा? वह एक 'फ्रन्ट' है। उसके अलावा फील्ड में फैक्ट्रियाँ हैं, वह दूसरा 'फ्रन्ट' है!

फील्ड में जो काम करेंगे, उनकी भलाई की दृष्टि से उनके जीवन को सुन्दर बनाने के लिए जो स्तर आवश्यक है वह कायम कैसे रहे, इसकी चिंता आवश्यक है। जो उत्पादन करते हैं, उनका उत्पादन में उत्साह बना रहे, इसकी भी चिंता होनी चाहिए। एक ओर अनिवार्य बचत की योजना बनायी जाती है और दूसरी ओर अर्थ-तंत्र ऐसा है कि चावल के भाव बढ़ते जाते हैं! इन योजना बनाने वाले कांग्रेसियों को यह बात पसंद न हो, तब भी वे उसे कह नहीं सकते! इसका मैं निषेध करता हूँ।

> आप एक काम करते हों, जिसे आप अत्यन्त आवश्यक मानते हों और मान लीजिये कि मुझे आपका विचार मान्य नहीं है, तब मैं उस पर टीका कर सकता हूँ, किन्तु निषेध नहीं। परन्तु इस वक्त तो मैं इस बात का निषेध कर रहा हूँ।

जो बात अनेक कांग्रेस वालों को पसंद नहीं, पर केवल पार्टी-अनुशासन के नाम पर वे प्रगट नहीं कर सकते। सौम्यता और रचनात्मक दृष्टि से भी वे उसे नहीं कह सकते। तब हम समझते हैं कि वहाँ लोकशाही खतम हुई है! हम राजनीति के ज्ञाता नहीं है, लेकिन एक सर्वसामान्य जीवन की बात करने वाले हैं। और अब तो विज्ञान के अधीन यह दुनिया रहेगी और यह सारा छोटा 'पालिटिक्स' नहीं चलने वाला।

मनु का वचन

जब विरोधी पार्टी मुँहफट बोलेगी और कांग्रेस पार्टी का मुंह सिला हुआ होगा, इसी प्रकार चलता रहेगा, तब आराजकता होगी। ऐसी हालत में लोगों का किसी पर विश्वास नहीं रहेगा, न विरोधी

[शेष पृष्ठ ११ पर]

पार्टी के अनुशासन के नाम पर लोगों का मुँह बन्द करने से लोकतंत्र समाप्त हो जायगा

ब्रह्म सत्यं जगत् स्फूर्तिः जीवनं सत्यशोधनम्

भूदानयज्ञ

लोकनागरी लिपि *

महीलाओं का वीशेष कार्‌य

समाज ज्यादातर पुरुषों का बना हे। अुन सब पुरुषों को ठीक मार्‌ग पर रखना, यह महीलाओं का काम हे। कहीं कोअी गलत काम करने जा रहा हे तो अुसको रोकना, यह स्‌त्रीयों का वीशेष कार्‌य हे। अपने यहां अेक शब्‌द खास बना हे-'पतीव्‌रता'। पतीव्‌रता का अर्‌थ पती के पीछे चले, अैसा नहीं। पती जो भला-बुरा काम कर रहा हे, अुसको पत्‌नी मदद दे या अनुमोदन दे, यह पतीव्‌रता का काम नहीं। लेकीन पती का जो व्‌रत हे, जीस धर्‌म-नीष्‌ठा को पती ने स्‌वीकार कीया हे, अुस धर्‌म-नीष्‌ठा और व्‌रत से अुसको साथ दे–यह पतीव्‌रता शब्‌द का अर्‌थ हे। अीसलीअे पुरुषों को ठीक रास्‌ते पर रखना, यह काम बहनों को करना चाहीअे। बहुत ज्‌यादा व्‌यसन बढ़ रहे हें। शराबखोरी बढ़ रही हे। अीन व्‌यसनों में से और शराबखोरी से पुरुषों को छुड़ाना पत्‌नी का काम हे, माता का काम हे, बहनों का काम हे। अुनको यह महसूस नहीं करना चाहीअे की हमारा स्‌थान गौण हे, बल्‌की अुनके अंकुश में पुरुष वर्‌ग रहता हे, अैसा होना चाहीअे। अीसलीअे मेंने कहा की आत्‌मज्ञान की जरूरत हे। अीश्‌वर की और दृष्‌टी हो, भक्‌ती की भावना भरी हो, तो वे पुरुषों को योग्‌य मार्‌ग पर रख सकती हें।

[कलकत्ता, १८ जून, '६३] –वीनोबा

* लिपि-संकेत : ि = ी, ी = ै, ख = ष संयुक्ताक्षर हलंत चिह्न से।

संपादकीय

अनिवार्य बचत योजना : एक चुनौती

भारत सरकार ने ता० १ जुलाई से अनिवार्य बचत योजना लागू की है। इस योजना के परिणामस्वरूप मोटे तौर पर हर व्यक्ति को, जिसकी आमदनी १५ सौ रुपये सालाना से ऊपर है, अपनी आय का तीन प्रतिशत सरकार द्वारा निर्दिष्ट किसी बैंक या पोस्ट आफिस में जमा कराना होगा। बचत की यह रकम व्यक्ति की खुद की रहेगी, लेकिन पाँच वर्ष से पहले वह उसे उपयोग में नहीं ला सकेगा। बचत की रकम पर ४ प्रतिशत ब्याज मिलेगा। इस योजना के फलस्वरूप करीब ४० करोड़ रुपया हर साल उपयोग में लेने के लिए सरकार को मिल सकेगा, ऐसा अनुमान है। यही इस योजना का मुख्य उद्देश्य है, क्योंकि सुरक्षा के बढ़े हुए खर्च के लिए सरकार को पूंजी की आवश्यकता है।

देश में चारों ओर से इस योजना का विरोध हुआ है। अनिवार्य जीवन बीमे की योजना के विषय पर लिखते हुए "भूदान यज्ञ" के ता० १४ जून के अंक में हमने बचत के विषय पर अपने कुछ विचार प्रगट किये थे। आज की केंद्रित और शोषक अर्थव्यवस्था के कारण सिक्के का मूल्य बराबर घटते जाने से बचत अपने आपमें कैसा भ्रमजाल है, इसका संकेत उस लेख में किया था। इस लेख में हम अनिवार्य बचत योजना के कुछ दूसरे महत्त्वपूर्ण पहलुओं की चर्चा करेंगे।

आर्थिक दृष्टि से यह "लेवी" मध्यम वर्ग के लोगों के लिए बहुत ही कष्टदायक होगी, इसमें कोई संदेह नहीं है। विनोबाजी ने स्वयं खुले तौर पर इस बचत योजना का विरोध किया है। साथ ही उन्होंने इस बात पर भी खेद प्रगट किया है कि बहुत से कांग्रेसपक्ष वालों को भी यह बात पसंद न होते हुए वे अनुशासन के कारण अपने विरोध को प्रकट नहीं कर रहे हैं और इस प्रकार लोगों के प्रतिनिधि होने का कर्तव्य नहीं बजा रहे हैं। इसके अलावा, अनिवार्य बचत की योजना बचत का आभास जरूर कराती है, पर मुद्रा की वास्तविक कीमत घटते जाने के कारण, वह अप्रत्यक्ष रूप से लोगों के शोषण का एक जरिया है। इस दृष्टि से सरकार का यह कदम अनैतिक–immoral–है।

एक दूसरा प्रश्न कई साथी कार्यकर्ताओं के मन में उठा है कि अनिवार्य बचत की यह योजना कानूनी अर्थ में टैक्स या कर नहीं होते हुए भी ऐसी योजना है, जो लोगों को इस बात के लिए मजबूर करती है कि वे सरकार को उसके खर्च के लिए, जिसका बहुत बड़ा हिस्सा सेना और शस्त्र-अस्त्रों पर खर्च होता है, सीधे अपनी आमदनी में से कुछ हिस्सा दें। सरकार अपना खर्च चलाने के लिए अनेक प्रकार के टैक्सों द्वारा रुपया वसूल करती है, पर आयकर तथा जमीन के लगान, और कुछ माने में बिक्री-कर के अलावा और सब टैक्स "अप्रत्यक्ष" टैक्स हैं। आर्थिक दृष्टि से मध्यम वर्ग में गिने जानेवाले लोगों के लिए –जिनमें अधिकांश सर्वोदय तथा संबंधित कार्यकर्ता आ जाते हैं – अनिवार्य बचत योजना के रूप में पहली बार इस प्रकार सरकार की सैनिक तैयारी इत्यादि के कामों में मजबूरन सहयोग देने का प्रश्न उपस्थित हुआ है। क्या हम लोग सैनिक तैयारी इत्यादि के काम में इस प्रकार सीधे सहयोग दें? जो अहिंसा में निष्ठा रखनेवाले हैं उनके लिए यह गम्भीरता से सोचने का प्रश्न जरूर है, पर साथ ही यह भी ध्यान में रखना जरूरी है कि जब तक हम अन्य बीसियों प्रकार से अप्रत्यक्ष रूप से सरकार को टैक्स दे रहे हैं, तब तक केवल अनिवार्य बचत की योजना का बहिष्कार करने में कितना बल आयेगा, या वैसा करना उचित होगा क्या? इसके लिए तो हमें फिर ज्यादा व्यापक रीति से और गहराई से सोच कर यह तय करना पड़ेगा कि हम किसी भी प्रकार का सीधा टैक्स सरकार को नहीं देंगे या कम-से-कम उतना हिस्सा नहीं देंगे जितना हिस्सा सरकार अपनी कुल आमदनी में से सेना या हिंसक तैयारी पर खर्च करती है। कई अन्य देशों में अहिंसा-निष्ठ लोग ऐसा कर रहे हैं। (देखिये-"भूदान यज्ञ", ता० २१ जून, '६३ पृष्ठ २)

पर अनिवार्य बचत योजना का एक और पहलू है, जो हमारी दृष्टि से इससे कहीं ज्यादा गम्भीर है। टैक्स लगाने का अधिकार हर सरकार को है और आजकल की लोकतांत्रिक पद्धति में निर्वाचित प्रतिनिधियों के बहुमत से सरकार टैक्स लगा सकती है। अन्य टैक्सों के साथ-साथ अगर सरकार ने ३ प्रतिशत जितना सीधा टैक्स १५ सौ रुपये वार्षिक और उससे ऊपर की आमदनी वाले सब लोगों पर लगाया होता तो गरीब मध्यम वर्ग के लोगों पर अत्यधिक बोझ या अन्य ऐसे ही कारणों से चाहे उस टैक्स का विरोध किया जा सकता था, लेकिन हमारी दृष्टि से वह उतना अनुचित नहीं होता जितना सीधा टैक्स न लगा कर इस प्रकार लोगों को अमुक काम करने के लिए मजबूर करना है। अपने वाजिब दायरे से बाहर जाकर इस प्रकार सरकार का लोगों के जीवन में प्रवेश करना और एक-एक कदम करके उनके सारे जीवन को, प्रवृत्तियों को, कामों को और विचारों तक को नियंत्रित करने की कोशिश करना लोकशाही की बुनियाद में सेंध लगाने जैसा है। आज सरकार लोगों को बचत करने के लिए मजबूर कर रही है, कल जीवन-बीमा कराने के लिए मजबूर करेगी, परसों इस बात में भी सरकार दखल देगी कि लोग किस तरह रहें, क्या खायें, क्या पीयें! शिक्षा और प्रचार के साधनों पर अर्थात् लोगों के मानस-परिवर्तन के साधनों पर पहले से ही सरकार का नियंत्रण है, जो और भी ज्यादा खतरनाक है।

इस प्रकार कल्याण की योजनाओं के नाम पर, संकटकालीन स्थिति के नाम पर, एक वर्ग से दूसरे वर्ग की रक्षा के नाम पर—धीरे-धीरे शासन के तंत्र का नियंत्रण लोगों के सारे जीवन को जकड़ता जा रहा है। आज भी हालत ऐसी है कि नाम के लिए, या भोली और नासमझ जनता को असलियत से बेखबर रखने के लिए, हम भले ही जनतंत्र की बात कहते और समझते रहें, लेकिन वास्तव में सत्ता चंद व्यक्तियों के हाथ में केंद्रित है, और लोकतंत्र की आड़ तथा लोगों की अनजान में ऐसी तानाशाही जो निखालिस दण्ड-शक्ति पर आधारित है, 'चोरद्वार' से प्रवेश कर रही है। वस्तुस्थिति ऐसी बनती जा रही है कि तानाशाही की स्थापना के लिए किसी को भी अगले दो-चार कदम ही उठाने बाकी रहेंगे। और चूंकि यह सब कल्याण, सुरक्षा इत्यादि के नाम पर हो रहा है, इसलिए यह खतरा लोगों की आँख से ओझल है।

हम मानते हैं कि सच्ची लोकशाही में निष्ठा रखनेवाले हर व्यक्ति के लिए यह अनिवार्य बचत योजना इस दृष्टि से एक गम्भीर चुनौती है। गांधीजी ने अपनी मृत्यु से एक दिन पहले लोकसेवक संघ के बारे में लिखते लिए भविष्यवाणी की थी :

"India has still to attain social, moral and economic independence in terms of [illegible] seven hundred thousand villages as distinguished from its cities & towns. The struggle for the ascendency of civil over military power is bound to take place in India's progress towards its democratic goal."
(M. K. Gandhi—29. 1. 48)

"भारत को, शहरों और कस्बों से भिन्न, अपने सात लाख (विभाजन के तुरन्त बाद, वास्तव में 'करीब पांच लाख' –सं०) गांवों की दृष्टि से सामाजिक, नैतिक और आर्थिक आजादी अभी प्राप्त करना बाकी है। –सच्ची लोकशाही के ध्येय की ओर बढ़ने के मार्ग में सैनिक शक्ति पर नागरिक शक्ति की विजय का संघर्ष अनिवार्य है।"
(गांधीजी–२९-१-४८)

मुल्कों को तानाशाही की ओर जाने से अगर बचाना है तो किसी-न-किसी कदम पर हमें इस प्रक्रिया के खिलाफ खड़ा होना ही होगा और अपने सक्रिय विरोध से आम लोगों का ध्यान इस खतरे की ओर आकर्षित करके उन्हें चेतावनी देनी होगी। सामूहिक रूप से इस प्रकार सक्रिय विरोध किस मौके और कदम पर किया जाय, यह सबके मिल कर सोचने की चीज है, पर व्यक्तिगत रूप से जिसे जब, जिस स्तेज पर अपनी अन्तरात्मा का आदेश मिले, इस गंभीर चुनौती के सामने खड़ा होना उसका कर्तव्य होगा।

–सिद्धराज

[पृष्ठ १ का शेषांश] **अनिवार्य बचत योजना से मध्यम वर्ग का शोषण**

पार्टी पर, न सत्तारूढ़ पार्टी पर। फिर लोग किसी को भी मत दें देंगे, परंतु उनका सहयोग नहीं रहेगा। लोगों के सहयोग से वंचित होने पर देश कैसे खड़ा रहेगा? जो चीज दीखती है उसे संयम, रचनात्मक ढंग और प्रेम से स्पष्ट रखनी चाहिए। वह अधिकार केवल विरोधी पार्टी को रहने से देश को खतरा है। इसलिए मनु महाराज ने कहा है–"सत्यम् ब्रूयात्, प्रियम् ब्रूयात्, न ब्रूयात् सत्यम् अप्रियम्"। सत्य बोलना चाहिए, प्रेमपूर्वक बोलना चाहिए। दोनों इकट्ठा बोलना चाहिए।

अपनी टीका

सत्ताधारी पार्टी और जिन्हें बहुमत मिला है, उनका काम है कि वे सत्य बोलें और प्रेमपूर्वक बोलें। *लेकिन वे ऐसा नहीं करके सत्य छिपाते हैं*, बोलना बंद करते हैं। मन में चाहे समझते होंगे कि यह बात ठीक नहीं, लेकिन बोलते नहीं हैं। इससे देश का भला नहीं होगा।

चीन में लोगों के मुँह बंद होते हैं, क्योंकि वहाँ कम्युनिज्म है। क्या मजाल कि कोई उसके खिलाफ बोलेगा? और कोई उसके खिलाफ बोलता है तो उसे खतम किया जाता है। पर यहाँ जिसे 'सेल्फ क्रिटिसिज्म'–अपने पर टीका करना कहते हैं, वह जरूर होनी चाहिए। उससे नुकसान नहीं होता। लेकिन यह सारा धंधा कौन करेगा? कोई नहीं करता, इसलिए बाबा को बोलना पड़ रहा है।

ग्रामदान गणतांत्रिक और शांतिवादी साधन

कुछ लोग समझते हैं कि बाबा मानता है कि ग्रामदान से ही चीन का मुकाबला कर सकेंगे और यह सेना वगैरह रखने लायक नहीं है। आप अगर निडर बन कर ऐसा कहेंगे कि सेना की कतई *जरूरत नहीं है तब तो बाबा नाचेगा।* मगर दिल में धड़कन हो तो कहूँगा कि ऐसे डरपोकों का काम नहीं कि वे अहिंसा की बात बोलें। ऐसी हालत में यदि आप लड़ाई की तैयारी करते हैं, तो मैं आपको दोष नहीं दूँगा। लेकिन अगर यह कहें कि ग्रामदान के बिना भी मुकाबला कर सकते हैं, तो हमारा उत्तर यह है कि ग्रामदान के सिवा मुकाबला नहीं कर सकते।

जब तक छोटे-छोटे गाँव हैं और छोटी-छोटी मिलकियत है, तब तक धीरे-धीरे गाँवों की जमीन बची जायगी और बंधक रखी जायगी। उसके बिना नहीं चलेगा। इसलिए ऐसी हालत में देश का दारिद्र्य नहीं मिटेगा, उत्पादन नहीं बढ़ेगा। इसलिए बिना ग्रामदान और बिना ग्रामसभा बनाये चीन का मुकाबला नहीं हो सकता। ग्रामदान ही गणतांत्रिक और शांतिवादी साधन है।

इसी तरह के आदर्श के आधार पर हम चायना के आदर्शवाद का मुकाबला कर सकेंगे।

तो अभी मैंने दो बातें कहीं। एक तो यह कि पार्टी के अनुशासन के नाम पर किसी का मुँह बंद नहीं होना चाहिए और दूसरी बात यह कि चीन का मुकाबला करने के लिए केवल सैनिक शक्ति अपर्याप्त होगी। आपको अपना सिद्धांत गाँव-गाँव में उन्नत रखना होगा।

यह मैं आपके निमित्त सारे देश को कह रहा हूँ।

[पड़ाव-बारुईपुर, जिला २४ परगना, प० बंगाल, ता० १०-६-६३] ●

भक्ति का स्वरूप

भक्तों की भक्ति का भी सामाजिक मूल्य नहीं आया। उन्होंने क्या किया ? पत्थर की एक मूर्ति खड़ी कर दी। दोनों बाजू पचास-पचास हाथ। एक-एक हाथ में एक-एक शस्त्र। उसके सामने सिर झुकाते हैं और कहते हैं कि हे शक्ति माता, हमें बचाओ। स्थूल रूप की पूजा की, इसका परिणाम यह हुआ कि गांव-गांव में ग्रामसभा के रूप में जो शक्ति देवता प्रतिष्ठित करनी चाहिए थी, वह न हुई।

डेढ़ सौ जनसंख्यावाला यह ग्राम ग्रामदान हुआ है तो अब इसमें डेढ़ सौ हाथवाली ग्राम-शक्ति पैदा हो गई। सबकी शक्ति अब ग्रामसभा को मिलेगी और वह ग्रामसभा ग्राम को बचाएगी। लोग ऐसा तो नहीं करते लेकिन पत्थर की मूर्ति खड़ी करते हैं। उसके सामने नैवद्य चढ़ाते हैं। उसे भगवान खाता नहीं तो भगवान के नाम पर वे स्वयं खा लेते हैं।

नामदेव की कथा शायद आप जानते होंगे। उसने भगवान् से कहा था कि जब तक तुम दूध नहीं पियोगे, तब तक मैं यहां से हटूंगा नहीं। तब भगवान् ने दूध पी लिया। वह कैसे पिया, यह मैं नहीं जानता। लेकिन आज अगर यह पता चले कि भगवान् के सामने जो नैवद्य रखते हैं, उसे वे खा जाते हैं तो दूसरे दिन हम नैवद्य रखना बन्द कर देंगे और कहेंगे कि जहां हम भगवान् समझकर गए थे, वहां तो भूत है।

यह कोई भक्ति है ? जो खाता नहीं, उसको नैवद्य चढ़ाते हैं और जो भूखा है उसे कुछ नहीं। इसीलिए समर्पण की क्रिया को सामाजिक मूल्य नहीं मिला। यह सिर्फ भावना बनकर रह गई। भावना का कुछ लाभ होता है। लेकिन उससे सामाजिक मूल्य नहीं बनता।

गांव का मुखिया अगर यह पूछ ले कि "क्या सब लोगों ने खाना खा लिया? अगर किसी ने नहीं खाया हो तो पहले उनके खाने का इन्तजाम करो बाद में मैं खाऊंगा।" यह पद्धति गांव का मुखिया रखेगा, तभी समर्पण का सामाजिक मूल्य आयेगा। यह ग्रामदान तो छोटा है, फिर भी वास्तविकता है, क्योंकि इसने सामाजिक मूल्य परिवर्तन किया है, इसलिए इसकी कीमत बढ़ गई है।

गणतंत्र का अर्थ

आज गणतंत्र दिवस है। गणतंत्र का यही अर्थ है कि उसमें सिर्फ अपनी न चले, सबकी चले। मैं सबका अंग बनूं। लेकिन आजकल क्या होता है ? सभी कहते हैं कि "मेरी चले,-मेरी चले"। ऐसा होने से गणतंत्र कैसे बनेगा। "मेरी इच्छा, मेरी शक्ति" समाज को अर्पण करें तब गणतंत्र होगा। "गणानाम् त्वाम् गणपतिम्..." पूजा में ऐसा बोला जाता है।

... स्वागत करते हैं। तब स...